[2022] 7 S.C.R. 5

दौवाराम निर्मलकर

विरूद्ध

छत्तीसगढ़ राज्य

आपराधिक अपील कमांक 1124/2022

02 अगस्त 2022

[**न्यायमूर्ति संजीव खन्ना और बेला एम. त्रिवेदी**]

दंड संहिता, 1860 - धारा 304 भाग 1 एवं 302 तथा धारा 300 का अपवाद 1 - निचली अदालतों द्वारा अपीलार्थी को अपने भाई की हत्या के लिए भा.दं.सं. की धारा 302 के तहत दोषी पाये जाने को चुनौती दी गई - यह तथ्य स्थापित कर साबित किया गया कि अपीलार्थी और मृतक उस रात एक साथ थे, जब मृतक को घातक चोटें पहुंचाई गई थीं, इसलिए भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 106 आकर्षित हो जाती है और किसी भी तोड़ -फोड़ या तीसरे पक्ष की भागीदारी के अभाव में तथ्यों और परिस्थितियों की श्रृंखला संदेह के परे स्थापित होकर यह बताती है कि अपीलार्थी ने ही अपने मृतक भाई को चोट पहुंचाई थी, अन्य व्यक्ति अपराधी नहीं था। इन परिस्थितियों में यह अवधारित किया गया कि मृतक द्वारा किये गये प्रकोपन के कार्य के कारण अपीलार्थी ने अपने भाई पर प्रहार किया था, वह प्रकोपन अचानक और गंभीर प्रकृति का था, जिससे अपीलार्थी ने अपना आत्म नियंत्रण खो दिया, इसलिए यह मामला भा.दं.सं. की धारा 300 के प्रथम अपवाद में आता है - मृतक शराब का आदी था और अपीलार्थी को लगातार प्रताड़ित कर दुव्र्यवहार करता था और धमकी देता था - घटना की रात मृतक ने शराब का सेवन किया था और अपीलार्थी से कहा था कि घर छोड़ दे नहीं तो वह अपीलार्थी को मार देगा। पूर्वकी प्रताड़ना के बाद अंतिम और अचानक प्रकोपन के कारण अपीलार्थी ने आत्म-नियंत्रण खो दिया था। भा.दं.सं. की धारा 300 का प्रथम अपवाद तब लागू होता है, जब गंभीर और अचानक प्रकोपन के कारण अपराधी आत्म-नियंत्रण से वंचित हो जाता है, जो उस व्यक्ति की मृत्यु का कारण बनता है, जिसने उत्तेजना दी थी। प्रकोपन के अपवाद को लागू करते हुए अपीलार्थी की धारा 302 भा.दं.सं. के तहत की गई दोषसिद्धि को धारा 304 भाग 1 में परिवर्तित किया गया।

दण्ड संहिता, 1860 - धारा 300 का अपवाद 1 - भा.दं.सं. की धारा 300 के अपवाद 1 के तहत प्रकोपन का बचाव - भा.दं.सं. की धारा 300 के अपवाद 1 को लागू करने का परीक्षण - अवधारित - जब भा.दं.सं. की धारा 300 के अपवाद 1 तहत प्रकोपन का बचाव लिया जाता है, तब विधि दो चीजों को बहुत महत्व देती है - पहला क्या उत्तेजना को शांत करने और अपने मन पर प्रभुत्व व नियंत्रण हासिल करने के लिए अभियुक्त के पास मध्यवर्ती अवधि थी, दूसरा दिये गये प्रकोपन से नाराजगी के तरीके का कुछ संबंध होना चाहिए - धारा 300 का अपवाद 1 यह प्रकट करता है कि जब एक समझदार व्यक्ति को

लगातार प्रताड़ित किया जाता है, तो हो सकता है कि समय के एक बिन्दु पर पहुंचकर उसका आत्म-नियंत्रण खो जाये और वह भटककर या विफर कर अपराध कर दे। उकसाने का सिद्धांत तत्काल या अंतिम उत्तेजक कार्य, शब्द या हावभाव, जो सत्यापन योग्य हों, की आवश्यकता को समाप्त नहीं करता है। इसके अलावा यह बचाव तब उपलब्ध नहीं होगा, जब अपराध प्रतिबिंवित अभ्यास, चिंतन और पूर्व चिंतन या योजना का परिणाम हो। न्यायालय को विवेकवान व्यक्ति के दृष्टिकोण से परिस्थितियों की जांच करनी है, यदि ऐसा गंभीर और अचानक प्रकोपन हुआ था, जिससे उचित रूप से यह निष्कर्ष निकाला जा सके कि ऐसी परिस्थितियों में रखा गया व्यक्ति अस्थाई रूप से आत्म-नियंत्रण खो सकता है और प्रकोपन के समय के निकट अपराध कर सकता है।

साक्ष्य अधिनियम, 1872 - धारा 25, 26, 27 - संस्वीकृति की ग्राह्यता - अवधारित - अभियुक्त द्वारा पुलिस को लिखाई गई प्रथम सूचना रिपोर्ट का कोई भी भाग अपराध में फंसाने वाले कथन के रूप में स्वीकार नहीं किया जा सकता है। हालांकि कथन को रिपोर्ट करने वाले के रूप में अभियुक्त की पहचान के लिए स्वीकार किया जा सकता है और बयान में दी गई जानकारी, जो इस तरह की जानकारी के परिणामस्वरूप खोजे गये महत्वपूर्ण तथ्य से स्पष्ट रूप से संबंधित हो, को भी धारा 27 साक्ष्य अधिनियम के तहत साक्ष्य में स्वीकार किया जा सकता है।

अपील को आंशिक रूप से स्वीकार करते हुए, न्यायालय ने

अभिनिर्धारित किया: 1.1 धारा 300 के अपवाद अपवाद 1 को लागू करने के लिए जिन शर्तों को पूरा किया जाना है, उन्हें के.एम. नानावती के मामले में उच्चतम न्यायालय ने निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया है:- (ए) मृतक ने अभियुक्त को प्रकोपन दिया हो, (बी) प्रकोपन गंभीर होना चाहिए, (सी) प्रकोपन अचानक होना चाहिए, (डी) अपराधी को उक्त प्रकोपन के कारण अपनी आत्म-नियंत्रण की शक्ति से वंचित किया जाना चाहिए था, (ई) अपराधी प्रकोपन को आत्म-नियंत्रण की शक्ति से वंचित रहने के दौरान मृतक की हत्या करनी चाहिए, और (एफ) अपराधी को उस व्यक्ति, जिसने प्रकोपन दिया हो या भूल अथवा दुर्घटना के कारण किसी अन्य व्यक्ति की मृत्यु कारित करना चाहिए। यह निर्धारित करने के लिए कि प्रकोपन ने अपराधी को अस्थाई रूप से आत्म-नियंत्रण की शक्ति से वंचित कर दिया था या नहीं, लागू किया जाने वाला परीक्षण एक युक्तियुक्त व्यक्ति का है, न कि एक असामान्य रूप से उत्तेजक और झगड़ालू व्यक्ति का। इसके अलावा इस बात पर विचार किया जाना चाहिए कि क्या उत्तेजना को शांत करने के लिए पर्याप्त अंतराल और समय था। (कंडिका 10)

1.2 के.एम. नानावती मामले में आगे यह भी अभिनिर्धारित किया गया कि - मृतक के पिछले कृत्यों से उत्पन्न मानसिक पृष्ठभूमि को यह पता लगाने के लिए विचार में रखा जा सकता है कि क्या पश्चातवर्ती कार्य अपराध करने के लिए अचानक और गंभीर प्रकोपन का कारण बना। हालांकि ऐसे मामलों में भा.दं.सं. की धारा 300 का अपवाद 1 अपराध से पहले प्रयुक्त उस आचरण से जुड़ी घटनाओं की श्रृंखला में से एक अंतिम कार्य, शब्द या हावभाव होते हैं, फिर भी आत्म-नियंत्रण की प्रतिक्रियाशील हानि

के लिए पर्याप्त अचानक प्रकोपन के बराबर एक समयावधि तक निरंतर और लगातार प्रकोपन हो सकते है। (कंडिका 11)

1.3 गंभीर और अचानक प्रकोपन से आत्म-नियंत्रण खोने का प्रश्न है, तो यह तथ्य का एक प्रश्न है। प्रकोपन और आत्म-नियंत्रण खोने का कार्य वास्तविक और युक्तियुक्त होना चाहिए। जब भा.दं.सं. की धारा 300 के अपवाद 1 तहत प्रकोपन का बचाव लिया जाता है, तब विधि दो चीजों को बहुत महत्व देती है - पहला क्या उत्तेजना को शांत करने और अपने मन पर प्रभुत्व व नियंत्रण हासिल करने के लिए कोई मध्यवर्ती अवधि थी, दूसरा दिये गये प्रकोपन से नाराजगी के तरीके का कुछ संबंध होना चाहिए व जबावी कार्यवाही प्रकोपन के अनुपात में होनी चाहिए। पहला भाग इस बात पर जोर देता है कि क्या एक युक्तियुक्त व्यक्ति के रूप में कार्य करने वाले अभियुक्त के पास सोचने और शांत होने का समय था। अपराधी के पास वैसी आत्म-नियंत्रण की शक्ति होने की उपधारणा की गई, जैसी कि उसी के जैसे सामाजिक स्तर के युक्तियुक्त व्यक्ति के पास होती, जब वह वैसी ही परिस्थितियों में होता, जिनमें अभियुक्त था। दूसरा भाग इस बात पर जोर देता है कि प्रकोपन के प्रति अपराधी की प्रतिक्रिया का निर्णय इस आधार पर किया जाना है कि क्या प्रकोपन तथ्यात्मक स्थिति में आत्म-नियंत्रण खोने के लिए पर्याप्त था। यहां फिर से न्यायालय को एक युक्तियुक्त व्यक्ति की परिस्थितियों के परीक्षण को लागू करना होगा। (कंडिका 12)

1.4 प्रकोपन की गंभीरता का आंकलन दुर्व्यवहार के इतिहास को ध्यान में रखते हुए किया जा सकता है, उसे कृत्यों, शब्दों या हावभावों के रूप में अंतिम उत्तेजक कार्य की गंभीरता तक सीमित रखने की आवश्यकता नहीं है। अभियुक्त की प्रतिक्रिया शुरू करने वाले अंतिम गलत कार्य की पहचान यह देखने के लिए की जानी चाहिए कि उससे आत्म-नियंत्रण का अस्थाई नुकसान हुआ था और अभियुक्त ने बिना योजना व पूर्व चिंतन के कार्य किया था। धारा 300 का अपवाद 1 यह बताता है कि जब एक युक्तियुक्त व्यक्ति को लगातार प्रताड़ित किया जाता है तो वह समय के एक ऐसे बिन्दु पर पहुंच जाता है, जहां वह अपना आत्म-नियंत्रण खो देता है और भटककर एवं विफर कर अपराध घटित कर देता है। प्रकोपन का यह सिद्धांत सत्यापन योग्य तात्कालिक या अंतिम कार्य, शब्द या हावभाव की आवश्यकता को परे नहीं करता है। इसके अलावा यह बचाव उपलब्ध नहीं होगा, यदि ऐसी साक्ष्य उपलब्ध हो, जो अभियुक्त के चिंतन और पूर्व योजना के अभ्यास को प्रतिबिंबित करती हो। (कंडिका 13)

2.1 के.एम. नानावती मामले में व्यक्त विचार के बाद बुधिसिंह मामले में इस न्यायालय ने यह कहा कि भा.दं.सं. की धारा 300 के प्रथम अपवाद के अनुप्रयोग में न्यायालय का प्राथमिक दायित्व एक विवेकवान व्यक्ति के दृष्टिकोण से परिस्थितियों की जांच कर यथोचित निष्कर्ष निकालना है, जिनमें वह गंभीर और अचानक प्रकोपन होने पर अस्थाई रूप से आत्म-नियंत्रण की शक्ति खो सकता था और प्रकोपन के निकट के समय अपराध कर सकता था। बुधिसिंह मामले में एक महत्वपूर्ण अवलोकन यह है कि प्रकोपन मृतक द्वारा अभियुक्त के साथ किया गया एक कार्य या कार्यों की श्रृंखला हो सकती है, जिसके परिणामस्वरूप मृतक को चोट पहुंची थी। इस अपवाद के पीछे का विचार उन हिंसा के कृत्यों को

बाहर करना है, जो पूर्व नियोजित होकर अतीत और बाद की घटनाओं के परिणामस्वरूप उत्पन्न मृतक और अभियुक्त के बीच पूर्व शत्रुता जैसी परिस्थितियों के परिणामस्वरूप उत्पन्न होती हैं। (कंडिका 14)

2.2 अभियोजन पक्ष को अभियुक्त की दोषिता साबित करनी होगी अर्थात उसे अपराध के उन सभी घटकों को स्थापित करना चाहिए, जिनका अभियुक्त पर आरोप लगाया गया है, लेकिन इस भार को अभियुक्त पर यह साबित करने के भार के साथ नहीं मिलाया जाना चाहिए कि मामला एक अपवाद के भीतर आता है, तथापि अभियुक्त अपने इस प्रमाण भार को उन्मोचित करने के लिए अभियोजन पक्ष के मामले और साक्ष्य पर निर्भर हो सकता है। इस संदर्भ में इस मामले में अभियोजन का पक्ष यह है कि मृतक शराब का आदी था और अपीलार्थी को लगातार प्रताड़ित करते हुए दुव्यवहार और धमकी देता था, घटना की रात मृतक ने शराब पी ली थी और अपीलार्थी से कहा था कि वह घर छोड़ दे नहीं तो वह अपीलार्थी को मार देगा। पूर्व प्रताड़ना से सुलगती आग के बाद अंतिम और तत्काल प्रकोपन के प्रभाव के कारण अचानक आत्म-नियंत्रण की शक्ति का अस्थाई नुकसान होने से कथित घटना घटित हुई,इस संदर्भ में हम अभियोजन पक्ष के मामले का उल्लेख करेंगे, जो यह है कि मृतक को शराब की लत थी, वह अपीलार्थी को लगातार प्रताड़ित करता था, दुव्यवहार करता था और धमकी देता था। घटना की रात, मृतक ने शराब का सेवन किया था और अपीलार्थी से कहा था कि वह घर छोड़ दे नहीं तो वह अपीलार्थी को मार देगा। पूर्व प्रताड़ना से सुलगती आग के बाद अंतिम और तत्काल प्रकोपन के प्रभाव के कारण अचानक आत्म-नियंत्रण की शक्ति का अस्थाई नुकसान हुआ, क्योंकि अपीलार्थी ने विद्युत प्रवाहित तारों को पकड़कर खुद को मारने की कोशिश की थी। इसलिए प्रकोपन के जिन कृत्यों के आधार पर अपीलार्थी ने अपने भाई की मृत्यु कारित की, वे अचानक और गंभीर दोनों थे, जिससे अपीलार्थी ने आत्म-नियंत्रण खो दिया था। (कंडिका 15)

3. प्रकोपन के अपवाद को लागू करते हुए अपीलार्थी की धारा 302 भा.दं.सं. के तहत की गई दोषसिद्धि को धारा 304 भाग 1 में परिवर्तित किया गया। (कंडिका 16)

अघनू नागेसिया बनाम बिहार राज्य [1966] 1 एससीआर 134; के.एम. नानावती बनाम महाराष्ट्र राज्य [1962] 1 पूरक एस. सी. आर. 567; और बुधि सिंह बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य (2012) 13 एससीसी 663: [2012] 11 एससीआर 848 - पर निर्भर।

रामपाल सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य (2012) 7 एस. सी. सी. 289:[2012] 7 एस. सी. आर. 160, आर. बनाम डफी (1949) 1 All.E.R. 932, एशवर्थ, 1975 क्रिमिनल एलआर 558-559 और जॉर्ज मौसौराकिस द्वारा लिखित 'कम्यूलेटिव प्रोवोकेशन एण्ड पार्सिअल डिफेंस इन इंग्लिश क्रिमिनल लॉ'- संदर्भित किया गया।

मामला कानून संदर्भ

[1966] 1 एससीआर 134,	पर भरोसा किया गया।	कंडिका 5
[1962] 1 पूरक एससीआर 567,	पर भरोसा किया गया।	कंडिका 10
[2012] 11 एससीआर 848	पर भरोसा किया गया।	कंडिका 14
[2012] 7 एससीआर 160	संदर्भित किया गया।	कंडिका 14

आपराधिक अपील न्यायनिर्णयः छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय की आपराधिक अपील संख्या 400/2013 में निर्णय दिनांकित 25.02.2019 से उदभूत आपराधिक अपील संख्या 1124/2022

अपीलार्थी हरिंदर मोहन सिंह, अधिवक्ता

उत्तरदाता द्वारा - सुमीर सोधी, ध्रूव वाधवा

न्यायमूर्ति **संजीव खन्ना** द्वारा निर्णय दिया गया।

1. अनुमति प्रदान की गई।

2. अपीलार्थी दौवाराम निर्मलकर को अपने भाई दशरथ निर्मलकर की हत्या के लिए भारतीय दण्ड संहिता, 1860[1] की धारा 302 के तहत दोषसिद्ध ठहराकर आजीवन कारावास एवं 1,000/- रुपये अर्थदण्ड, जिसके भुगतान के व्यतिक्रम में 06 माह की अवधि का साधारण कारावास की सजा सुनाई गई है।

3. डॉ. नोहर प्रसाद जांगड़े (अ.सा.12) शासकीय जिला अस्पताल दुर्ग जिला दुर्ग छत्तीसगढ़ के वरिष्ठ चिकित्सा अधिकारी ने पोस्टमार्टम रिपोर्ट प्र.पी.18 को साबित करते हुए गवाही दी कि दशरथ निर्मलकर की मृत्यु उसके सिर की खोपड़ी पर आई चोटों से खोपड़ी की हड्डी में हुए अस्थिभंग और उससे उत्पन्न सदमे के परिणामस्वरूप कोमा के कारण हुई थी। दशरथ निर्मलकर को सामने बांये पाश्र्व और पश्चातवर्ती बांये पाश्र्व भाग में एक गहरे घाव के साथ कई अस्थिभंग थे, ठोड़ी पर भी एक फटा हुआ घाव था। दशरथ निर्मलकर की आपराधिक मानव वध से मृत्यु होना हमारे सामने विवादित और चुनौतीपूर्ण नहीं है।

4. अपराधी के रूप में अपीलार्थी की संलिप्तता के सवाल पर, हम उच्च न्यायालय और विचारण न्यायालय से सहमत हैं। इसमें कोई संदेह नहीं है कि स्वतंत्र गवाह मनोज विश्वकर्मा (अ.सा.1) एक स्थानीय शिक्षक, बृजेश शर्मा (अ.सा.2) एक सब्जी विक्रेता, भगवती प्रसाद निर्मलकर (अ.सा.3) अपीलार्थी का छोटा भाई, नकुल राम साहू (अ.सा.4) अपीलार्थी का पड़ोसी, त्रिवेणी बाई (अ.सा.7) अपीलार्थी की बहन, गीता बाई (अ.सा.8) अपीलार्थी की साली, कुमारी शांति निर्मलकर (अ.सा.9)

अपीलार्थी की भतीजी, कुमारी मधु निर्मलकर (अ.सा.10) अपीलार्थी की भतीजी और केजौरम निर्मलकर (अ.सा.11) अपीलार्थी के सौतेले बहनोई पक्षद्रोही हो गए।

5. 26 सितंबर, 2011 को अपीलार्थी स्वयं पुलिस थाने गया और अपराध की संस्वीकृति दी, हालांकि वह संस्वीकृति भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872[2] की धारा 25 के तहत स्वीकारोक्ति के प्रमाण के रूप में अग्राह्य है। **अघनू नागेसिया बनाम बिहार राज्य**[3] में इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि अग्राह्य बयान में न केवल अपराध की स्वीकृति शामिल है, बल्कि अपराध में फसाने वाले दोषपूर्ण तथ्यों की स्वीकृति भी शामिल है। साक्ष्य को स्वीकार करने के लिए कुछ उच्च न्यायालयों द्वारा लागू किए गए पृथक्करण परीक्षण, जिसमें गैर-संस्वीकृति वाला भाग अलग करके स्वीकारा जाता है, वहां गैरसंस्वीकृति वाला भाग स्वीकार करने के लिए प्रत्येक वाक्य पृथक माना जाता है, इस कारण वह भ्रामक होकर अस्वीकार कर दिया गया। इस प्रकार अभियुक्त द्वारा पुलिस के पास दायर की प्रथम सूचना रिपोर्ट संस्वीकृति होने के कारण साक्ष्य के तौर प्रथम सूचना रिपोर्ट का कोई हिस्सा स्वीकारा नहीं जा सकता। हालांकि बयान को रिपोर्ट के निर्माता के रूप में अभियुक्त की पहचान करने के लिए स्वीकार किया जा सकता है। इसके अलावा, बयान में दी गई जानकारी का वह हिस्सा, जो ऐसी जानकारी के परिणामस्वरूप खोजे गए तथ्य से स्पष्ट रूप से संबंधित है, को भी साक्ष्य अधिनियम की धारा 27 के तहत साक्ष्य में स्वीकार किया जा सकता है, बशर्ते कि तथ्य की खोज किसी भौतिक वस्तु[4] के संबंध में होनी चाहिए। आगे अपीलार्थी का आचरण साक्ष्य अधिनियम की धारा 8 के तहत सुसंगत और स्वीकार्य है।

6. वर्तमान मामले में अपीलार्थी द्वारा किए गए प्रकटीकरण पर अभियुक्त जहां रहता है, उस घर में रखे गए लकड़ी के डिब्बे से एक कुल्हाड़ी जप्त की गई थी। जप्त की गई कुल्हाड़ी और अपीलार्थी की शर्ट, जो उसने घटना के समय पहनी थी, खून से सना हुआ पाया गया। अपीलार्थी द्वारा किए गए प्रकटीकरण से उस घर से, जहां अपीलार्थी रह रहा था, दशरथ निर्मलकर का शव भी मिला।

7. यह स्वीकार्य स्थिति है कि अभियोजन साक्षी मनोज विश्वकर्मा (अ.सा.1), बृजेश शर्मा (अ.सा.2), भगवती प्रसाद निर्मलकर (अ.सा.3), नकुल राम साहू (अ.सा.4), त्रिवेणी बाई (अ.सा.7), गीता बाई (अ.सा.8), कुमारी शांति निर्मलकर (अ.सा.9), कुमारी मधु निर्मलकर (अ.सा.10) और केजौरम निर्मलकर (अ.सा.11) जो हालांकि पक्षद्रोही घोषित हो चुके हैं, लेकिन उन्होंने एक स्वर में बयान दिया है कि अपीलार्थी और दशरथ निर्मलकर एक ही घर के अलग अलग कमरों में रहते थे। कुमारी शांति निर्मलकर (अ.सा.9) और कुमारी मधु निर्मलकर (अ.सा.10) की गवाही महत्वपूर्ण है, क्योंकि वे घटना के समय घर में मौजूद थे। कुमारी शांति निर्मलकर (अ.सा.9) ने कहा था कि उनकी बहन कुमारी मधु निर्मलकर (अ.सा.10) आई और बताया कि उनके चाचा दशरथ निर्मलकर की मृत्यु हो गई। कुमारी शांति निर्मलकर (अ.सा.9) ने दावा किया था कि कुमारी मधु निर्मलकर (अ.सा.10) ने उन्हें बताया था कि दशरथ निर्मलकर की हत्या अपीलार्थी द्वारा की गई। हालांकि कुमारी मधु निर्मलकर (अ.सा.10) ने ऐसा कोई बयान देने का या उसने अपीलार्थी को अपराध करते देखा था, ऐसा कोई दावा नहीं किया। उसी समय, कुमारी शांति निर्मलकर (अ.सा.9) और कुमारी मधु निर्मलकर (अ.सा.10) ने उस रात किसी

घुसपैठिये या तीसरे व्यक्ति की उपस्थिति के बारे में गवाही नहीं दी। प्रतिपरीक्षण में भी उन्हें ऐसा कोई सुझाव नहीं दिया। मनोज विश्वकर्मा (अ.सा.1), बृजेश शर्मा (अ.सा.2), भगवती प्रसाद निर्मलकर (अ.सा.3), नकुल राम साहू (अ.सा.4), त्रिवेणी बाई (अ.सा.7), गीताबाई (अ.सा.8) और केजौरम निर्मलकर (अ.सा.11) को भी इस तरह के सुझाव नहीं दिए गए। इसलिए दं.प्र.सं., 1973[5] की धारा 313 के तहत अपने बयान में अपीलार्थी के बचाव का कोई महत्व नहीं है कि किसी तीसरे व्यक्ति ने उसके भाई दशरथ निर्मलकर की हत्या कर दी थी और इसे उचित ही खारिज कर दिया गया है। अपीलार्थी के हाथों में जलन की चोटें आईं, जिसे अपीलार्थी ने दं.प्र.सं. की धारा 313 के तहत अपने बयान में स्वीकार किया था। अपीलार्थी ने बिजली प्रवाहित तारों को पकड़कर आत्महत्या करने की कोशिश की और बाद में उस को भा.दं.सं. की धारा 309[6] के अंतर्गत अपराध में आरोपित किया गया। अपीलार्थी ने अपना दोष स्वीकारा और परिणामतः 10 दिनों के लिए साधारण कारावास की सजा से दंडित किया गया। अतः यह तथ्य कि अपीलार्थी और मृतक उस रात एक साथ थे, जब मृतक को घातक चोटें आईं, स्थापित और सिद्ध होता है। इसलिए साक्ष्य अधिनियम की धारा 106[7] आकर्षित होती है और किसी भी घुसपैठ या तीसरे पक्ष की भागीदारी के अभाव में, तथ्यों और परिस्थितियों की श्रृंखला संदेह से परे स्थापित होती है, यह बताती है कि अपीलार्थी ने ही दशरथ निर्मलकर को चोट पहुंचाई थी और कोई अन्य व्यक्ति नहीं था।

8. हालांकि हमारी राय में यह मामला भा.दं.सं. की धारा 300[8] के अपवाद 1 के तहत आएगा। अपीलार्थी और मृतक के छोटे भाई भगवती प्रसाद निर्मलकर (अ.सा.3) ने बयान दिया था कि मृतक अक्सर शराब पीता था, परिवार के साथ कम बातचीत करता था और अपीलार्थी के साथ बहस और झगड़ा करता था। अपीलार्थी के पड़ोसी नकुल राम साहू (अ.सा.4) ने इसी तरह गवाही दी थी कि मृतक शराब का आदी था और उसकी पत्नी ने उसे छोड़ दिया था। भगवती प्रसाद निर्मलकर (अ.सा.3) की पत्नी गीता बाई (अ.सा.8), अपीलार्थी और दशरथ निर्मलकर की भतीजियां कुमारी शांति निर्मलकर (अ.सा.9) व कुमारी मधु निर्मलकर (अ.सा.10) का यह समान बयान है कि दशरथ निर्मलकर शराब का आदी था और वह बेहद अपमानजनक और खराब स्वभाव का था। अभियोजन पक्ष इस स्थिति पर विवाद नहीं करता है और वास्तव में हेतुक दिखाने के लिए इन तथ्यों को आधार बनाता है।

9. धारा 300[9] का अपवाद 1, अपवाद 4 से भिन्न है। अपवाद 1 तब लागू होता है, जब गंभीर और अचानक प्रकोपन के कारण अपराधी आत्म-नियंत्रण की शक्ति को खोकर, उस व्यक्ति की मृत्यु कारित करता है, जिसने प्रकोपन दिया है। अपवाद 1 तब भी लगता है, जब अपराधी गंभीर और अचानक प्रकोपन के कारण अपनी आत्मशक्ति को खोकर किसी अन्य व्यक्ति की मृत्यु भूल या दुर्घटना के कारण कारित कर देता है। अपवाद 4 तब लगता है, जब अपराध बिना किसी पूर्वचिंतन के, अचानक लड़ाई में उत्तेजना में आकर झगड़े में कारित कर देता है और अपराधी आपराधिक मानव वध क्रूर और असाधारण तरीके का अयुक्त लाभ लिए बिना कारित करता है। अपवाद 4 का स्पष्टीकरण कहता है कि ऐसे मामलों में यह सारहीन है कि किस पक्ष ने प्रकोपन दिया या पहला हमला किया।

10. **के.एम. नानावती** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[10] में धारा 300 के अपवाद 1 की व्याख्या करते हुए इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि अपवाद लागू करने के लिए जिन शर्तों को पूरा किया जाना चाहिए, वे हैं (ए) मृतक ने अभियुक्त को प्रकोपन दिया हो, (बी) प्रकोपन गंभीर होना चाहिए, (सी) प्रकोपन अचानक होना चाहिए, (डी) अपराधी को उक्त प्रकोपन के कारण अपनी आत्म-नियंत्रण की शक्ति से वंचित किया जाना चाहिए था, (ई) अपराधी प्रकोपन को आत्म-नियंत्रण की शक्ति से वंचित रहने के दौरान मृतक की हत्या करनी चाहिए थी, और (एफ) अपराधी को उस व्यक्ति, जिसने प्रकोपन दिया हो या भूल अथवा दुर्घटना के कारण किसी अन्य व्यक्ति की मृत्यु कारित करना चाहिए। यह निर्धारित करने के लिए कि प्रकोपन ने अपराधी को अस्थाई रूप से आत्म-नियंत्रण की शक्ति से वंचित कर दिया था या नहीं, लागू किया जाने वाला परीक्षण एक युक्तियुक्त व्यक्ति का है, न कि एक असामान्य रूप से उत्तेजक और झगड़ालू व्यक्ति का। इसके अलावा इस बात पर विचार किया जाना चाहिए कि क्या उत्तेजना को ठंडा करने के लिए पर्याप्त अंतराल और समय था। **के.एम. नानावती** (उपरोक्त) ने संक्षेप में कहा है:

"84. क्या "गंभीर और अचानक" प्रकोपन के सिद्धांत के प्रयोग के लिए युक्तियुक्त व्यक्ति का कोई मानक है ? तर्क संगतता का कोई अमूर्त मानक निर्धारित नहीं किया जा सकता है। एक समझदार व्यक्ति किन्हीं परिस्थितियों में क्या करेगा, यह रीति, तौर तरीकों, जीवन के ढंग, पारंपरिक मूल्यों इत्यादि पर निर्भर करता है। संक्षेप में समाज की सामाजिक और भावनात्मक पृष्ठभूमि जिससे एक अभियुक्त संबंधित है, उस पर निर्भर करता है। हमारे विशाल देश में सभ्यता के निम्नतम से लेकर उच्चतम स्तर तक के सामाजिक समूह हैं। किसी भी मानक को सटीकता के साथ निर्धारित करना न तो संभव है और न ही वांछनीय है। प्रत्येक मामले में अदालत को ही संबंधित परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए निर्णय लेना चाहिए। इस मामले में यह पता लगाना आवश्यक नहीं है कि क्या अभियुक्त के पद पर तैनात एक समझदार व्यक्ति ने क्षणिक रूप से या अस्थाई रूप से अपना आत्म-नियंत्रण खो दिया होगा, जब उसकी पत्नी ने उसके सामने दूसरे के साथ अपने अवैध संबंध स्वीकार किये हों, क्योंकि हम इस सबूत पर संतुष्ट हैं कि अभियुक्त ने अपना आत्म-नियंत्रण हासिल कर लिया और जानबूझकर मृतक की हत्या कर दी।

85. वर्तमान जांच से संबंधित भारतीय कानून को इस प्रकार उल्लेखित किया जा सकता है - (1) "गंभीर और अचानक" प्रकोपन की परीक्षा यह है कि क्या एक उचित व्यक्ति, समाज के उसी वर्ग से संबंधित है, जिससे अभियुक्त संबंधित है, उस स्थिति में रखा जाता है, जिसमें अभियुक्त को रखा गया था, इस तरह से प्रकोपित किया था कि वह अपना आत्म-नियंत्रण खो देगा। (2) भारत में, शब्द और हावभाव, कुछ परिस्थितियों में, किसी अभियुक्त को गंभीर और अचानक प्रकोपन का कारण बन सकते हैं, ताकि उसके कार्य को भारतीय दण्ड संहिता की धारा 300 के पहले अपवाद के भीतर लाया जा सके। (3) पीड़ित के पिछले कार्य से उत्पन्न मानसिक पृष्ठभूमि को यह पता लगाने में ध्यान में रखा जा सकता है कि क्या बाद के कार्य ने अपराध करने के लिए गंभीर और अचानक प्रकोपन का कारण बना। (4)

घातक आघात का पता स्पष्ट रूप से उस प्रकोपन से उत्पन्न उत्तेजना के प्रभाव से लगाया जाना चाहिए, न कि समय बीतने के बाद उत्तेजना के ठंडा होने के बाद, अन्यथा पूर्व-योजना और चिंतन के लिए जगह और गुंजाईश मिल जाती है।"

11. **के.एम. नानावती** (उपरोक्त) ने माना है कि मृतक के पिछले कृत्यों से उत्पन्न मानसिक पृष्ठभूमि को यह पता लगाने के लिए विचार में रखा जा सकता है कि क्या पश्चातवर्ती कार्य अपराध करने के लिए अचानक और गंभीर प्रकोपन का कारण बना। एक समयावधि तक निरंतर और लगातार प्रकोपन हो सकता है, भले ही ऐसे मामलों में भा.दं.सं. की धारा 300 का अपवाद 1 अपराध से पहले लागू होता है, उस आचरण से जुड़ी घटनाओं की श्रृंखला में एक अंतिम कार्य, शब्द या हावभाव था, जो प्रतिक्रियाशील आत्म-नियंत्रण के नुकसान के लिए पर्याप्त अचानक प्रकोपन के बराबर था। **के.एम. नानावती** (उपरोक्त) द्वारा **आर. बनाम डफी**[11] में दी गई परिभाषा का उल्लेख करते हैं।

"...मृत व्यक्ति द्वारा अभियुक्त के लिए किए गए कुछ कार्य या कृत्यों की श्रृंखला, जो किसी भी युक्तियुक्त व्यक्ति को और वास्तव में अभियुक्त को अचानक और अस्थाई रूप से आत्म-नियंत्रण से वंचित करता है, जिससे अभियुक्त को इस तरह की उत्तेजना के अधीन कर दिया जाता है कि वह उस क्षण के लिए अपने मन का स्वामी नहीं रहता। उत्तेजना वास्तव में परिस्थितियां जो बदला लेने की इच्छा को प्रेरित करती हैं, वे प्रकोपन के साथ असंगत हैं, क्योंकि बदला लेने की इच्छा के सचेत निर्माण का अर्थ है कि व्यक्ति के पास सोचने और विचार करने का समय था और यह आत्म-नियंत्रण के अचानक अस्थाई वंचन को नकारात्मक बना देगा, जो प्रकोपन का सार है।"

12. गंभीर और अचानक प्रकोपन से आत्म-नियंत्रण खोने का सवाल तथ्य का सवाल है। प्रकोपन और आत्म-नियंत्रण से वंचन का कार्य वास्तविक और युक्तियुक्त होना चाहिए। जब भा.दं.सं. की धारा 300 के अपवाद 1 के तहत प्रकोपन का बचाव किया जाता है, तो विधि दो चीजों को बहुत महत्व देती है। पहला, क्या कोई उत्तेजना को शांत करने के लिए और अभियुक्त के लिए अपने दिमाग पर प्रभुत्व और नियंत्रण हासिल करने के लिए कोई मध्यवर्ती अवधि थी। दूसरा, नाराजगी के तरीके का उस तरह के उकसावे से कुछ संबंध होना चाहिए, जो दिया गया है। प्रतिशोध प्रकोपन के अनुपात में होना चाहिए।[12] पहला भाग इस बात पर जोर देता है कि क्या अभियुक्त के पास सोचने और शांत होने का समय था। अपराधी के पास उस साधारण या युक्तियुक्त व्यक्ति के आत्म-नियंत्रण की सामान्य शक्ति होने की अवधारणा की जा सकती है, जो कि अभियुक्त की समान सामाजिक श्रेणी में, उसी स्थिति में रखा गया हो, जिसमें अभियुक्त हो, और तब वह अस्थाई रूप से आत्म-नियंत्रण की शक्ति खो दे। दूसरा, भाग इस बात पर जोर देता है कि प्रकोपन प्रति अपराधी की प्रतिक्रिया का अवधारण इस आधार पर किया जाना है कि क्या प्रकोपन तथ्य स्थिति में आत्म-नियंत्रण से वंचित करने के लिए पर्याप्त था। यहां फिर से अदालत को परिस्थितियों में एक युक्तियुक्त व्यक्ति के परीक्षण को लागू करना होगा। इन प्रश्नों की जांच करते समय, हमें संकीर्ण दृष्टि वाला नहीं होना चाहिए और मृत्यु के दिन की घटनाओं सहित पूरी घटनाओं को ध्यान में रखना चाहिए, क्योंकि ये यह तय करने के लिए प्रासंगिक हैं कि क्या अभियुक्त प्रकोपन के

संचयी और निरंतर तनाव के तहत काम कर रहा था। प्रकोपन की गंभीरता अभियुक्त के प्रति पीड़ित के पूरे अपमानजनक व्यवहार को बताती है। गंभीरता प्रकोपन के एक या अंतिम कार्य पर निर्भर नहीं करता, जिसे दंडात्मक कार्यवाही को आकर्षित करने के लिए अपने आप में पर्याप्त माना जाता है। अंतिम प्रकोपन को पिछले उत्तेजक कृत्यों या शब्दों के प्रकाश में समझा जाना चाहिए कि क्या वह अभियुक्त आत्म-नियंत्रण से वंचित करने के लिए पर्याप्त गंभीर थे। संचयी या निरंतर प्रकोपन का परीक्षण तब संतुष्ट होगा, जब अभियुक्त का प्रतिशोध किसी प्रकार के उत्तेजक आचरण, जो अचानक या तत्काल से तुरंत पहले और त्वरित प्रकोपन की आवश्यकता को पूरा करता हो, किया गया हो।

13. अतः प्रकोपन की गंभीरता का आंकलन दुव्यवहार के इतिहास को ध्यान में रखते हुए किया जा सकता है और इसे कृत्यों, शब्दों या हावभावों के रूप में अंतिम उत्तेजक कार्य की गंभीरता सीमित करने की आवश्यकता नहीं है। अंतिम दुराचार, जिससे अभियुक्त की प्रतिक्रिया शुरू होती है, की पहचान यह दिखाने के लिए की जानी चाहिए कि आत्म-नियंत्रण का अस्थाई वंचन हुआ था और अभियुक्त ने बिना योजना और पूर्व-चिंतन के काम किया था। एशवर्थ[13] द्वारा निम्नलिखित शब्दों में इसका सारांश दिया गया है:

"मृतक के अंतिम कार्य के महत्व को पक्षों के बीच पिछले संबंधों के संदर्भ में और किसी भी पिछली घटनाओं को ध्यान में रखते हुए, जो अंतिम कार्य पर प्रकाश डाली है, विचार किया जाता है। यह तर्क देने के लिए नहीं है कि अचानक प्रकोपन वाली हत्याओं और प्रतिशोध की हत्याओं के बीच मूल अंतर को धुंधला कर दिया जाना चाहिए, क्योंकि मृतक के अंतिम कार्य और अभियुक्त के प्रतिशोध के बीच का समय उसके खिलाफ बताना जारी रखना चाहिए। मुख्य बात यह है कि मृतक के अंतिम कार्य का महत्व और अभियुक्त पर इसके प्रभाव और वास्तव में उस कार्य के प्रति प्रतिशोध के संबंध को पक्षों के बीच पिछले लेनदेन के संदर्भ के बिना न तो समझा जा सकता है और न ही मूल्यांकन किया जा सकता है।"

धारा 300 के अपवाद 1 में यह माना गया है कि जब एक समझदार व्यक्ति को लगातार प्रताड़ित किया जाता है, तो वह एक समय पर अनियंत्रित हो सकता है और एक ऐसे बिन्दु पर पहुंच सकता है, जिससे वह आत्म-नियंत्रण खो सकता है, विफर सकता है और अपराध कर सकता है। हालांकि निरंतर प्रकोपन का सिद्धांत तत्काल या अंतिम प्रकोपित कार्य, शब्दों या हावभाव की आवश्यकता को दूर नहीं करता है, जिसे सत्यापित किया जाना चाहिए। इसके अलावा यह बचाव उपलब्ध नहीं होगा, यदि ऐसी साक्ष्य उपलब्ध हो, जो अभियुक्त के चिंतन और पूर्व योजना के अभ्यास को प्रतिबिंबित करती हो।

14. **के.एम. नानावती** (उपरोक्त) में व्यक्त विचार के बाद, यह न्यायालय **बुधिसिंह बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य**[14] में भा.दं.सं. की धारा 300 के अपवाद 1 के उपयोग, परीक्षण के लिए अदालत का प्राथमिक दायित्व परिस्थितियों की जांच करना है कि युक्तियुक्त विवेक वाले व्यक्ति का दृष्टिकोण, यदि ऐसा गंभीर

और अचानक प्रकोपन था, जो युक्तियुक्त रूप से यह निष्कर्ष निकाल सके कि ऐसी परिस्थितियों में रखा गया व्यक्ति अस्थाई रूप से आत्म-नियंत्रण खो सकता है और प्रकोपन के समय के निकट अपराध कर सकता है। **बुधिसिंह** (उपरोक्त) में एक महत्वपूर्ण अवलोकन यह है कि प्रकोपन मृतक द्वारा अभियुक्त के साथ किया गया एक कार्य या कृत्यों की श्रृंखला हो सकती है, जिसके परिणामस्वरूप उसे चोट लगी हो। इस अपवाद के पीछे का विचार उन हिंसा के कृत्यों को बाहर करना है, जो पूर्व नियोजित हैं और अतीत की घटनाओं के परिणामस्वरूप उत्पन्न होने वाली और बाद में अचानक और गंभीर प्रकोपन के परिणामस्वरूप मृतक और अभियुक्त के बीच पूर्व शत्रुता जैसी परिस्थितियों पर विचार करने को नकारना नहीं है। उपरोक्त प्रस्ताव के समर्थन में और **बुधिसिंह** (उपरोक्त) में भा.दं.सं. की धारा 304 भाग 1 में दोषसिद्धि को परिवर्तित करने के लिए, न्यायालय ने **रामपाल सिंह बनाम उ.प्र. राज्य**[15] को आधार बनाया।

15. स्पष्टता के लिए यह कहा जाना होगा कि अभियोजन पक्ष को अभियुक्त की दोषिता साबित करनी होगी अर्थात उसे अपराध के उन सभी घटकों को स्थापित करना चाहिए, जिनका अभियुक्त पर आरोप लगाया गया है, लेकिन इस भार को अभियुक्त पर यह साबित करने के भार के साथ नहीं मिलाया जाना चाहिए कि मामला एक अपवाद के भीतर आता है, तथापि ऐसे भार का निर्वहन करने के लिए अभियुक्त अभियोजन पक्ष के मामले और उसके द्वारा दिए गए साक्ष्य पर भरोसा कर सकता है। इस संदर्भ में हम अभियोजन पक्ष के मामले का उल्लेख करेंगे, जो यह है कि मृतक को शराब की लत थी, वह अपीलार्थी को लगातार प्रताड़ित करता था, दुव्यवहार करता था और धमकी देता था। घटना की रात, मृतक ने शराब का सेवन किया था और अपीलार्थी से कहा था कि वह घर छोड़ दे नहीं तो वह अपीलार्थी को मार देगा। पूर्व प्रताड़ना से सुलगती आग के बाद अंतिम और तत्काल प्रकोपन के प्रभाव के कारण अचानक आत्म-नियंत्रण की शक्ति का अस्थाई नुकसान हुआ, क्योंकि अपीलार्थी ने विद्युत प्रवाहित तारों को पकड़कर खुद को मारने की कोशिश की थी, इसलिए हम मानते हैं कि प्रकोपन के कार्य, जिसके आधार पर अपीलार्थी ने अपने भाई दशरथ निर्मलकर की मृत्यु कारित की, अचानक और गंभीर दोनों थे और आत्म-नियंत्रण का वंचन हुआ था।

16. प्रकोपन के अपवाद का प्रयोग करते हुए, हम अपीलार्थी की दोषसिद्धि को भा.दं.सं. की धारा 302 से धारा 304 भाग 1 में परिवर्तित कर देंगे।

17. सजा के सवाल पर हमें सूचित किया गया है कि अपीलार्थी पहले ही 10 साल से अधिक समय से कारावास भोग चुका है, क्योंकि वह 27 सितंबर, 2011 से हिरासत में है। उपरोक्त परिस्थितियों में हम कारावास की सजा को पहले से गुजर चुकी अवधि में संशोधित करने के लिए इच्छुक हैं। इसके अलावा अपीलार्थी को 1,000/- रुपये का जुर्माना देना होगा और व्यतिक्रम करने पर 06 माह की अवधि के लिए साधारण कारावास भुगतना होगा। यदि अभियुक्त को किसी अन्य मामले में हिरासत में लेने की आवश्यकता नहीं है तो कारावास या जुर्माने के भुगतान पर अपीलार्थी को तुरंत रिहा करने का निर्देश दिया जाता है।

18. उपरोक्त शर्तों में दोषसिद्धि और सजा को संशोधित करने की अनुमति के साथ अपील आंशिक रूप से स्वीकार की जाती है।

अपील आंशिक रूप से स्वीकार।

बिभूति भूषण बोस

(सहायक: नेहा शर्मा, एल.सी.आर.ए.)

---

[1] For short, "IPC".

[2] For short, "Evidence Act".

[3] (1966) 1 SCR 134.

[4] Khatri Hemraj Amulakh v. State of Gujarat, (1972) 3 SCC 671.

[5] For short, "Cr.P.C."

[6] 309. Attempt to commit suicide. —Whoever attempts to commit suicide and does any act towards the commission of such offence, shall be punished with simple imprisonment for a term which may extend to one year 3 [or with fine, or with both.]

[7] 106. Burden of proving fact especially within knowledge. –– When any fact is especially within the knowledge of any person, the burden of proving that fact is upon him.

[8] 300. Murder. —Except in the cases hereinafter excepted, culpable homicide is murder, if the act by which the death is caused is done with the intention of causing death, or—

Secondly. —If it is done with the intention of causing such bodily injury as the

offender knows to be likely to cause the death of the person to whom the harm is caused, or—

Thirdly. —If it is done with the intention of causing bodily injury to any person

and the bodily injury intended to be inflicted is sufficient in the ordinary course of nature to cause death, or—

Fourthly. —If the person committing the act knows that it is so imminently dangerous that it must, in all probability, cause death, or such bodily injury as is likely to cause death, and commits such act without any excuse for incurring the risk of causing death or such injury as aforesaid.

Exception 1. —When culpable homicide is not murder. —Culpable homicide

is not murder if the offender, whilst deprived of the power of self-control by grave and sudden provocation, causes the death of the person who gave the provocation or causes the death of any other person by mistake or accident.

The above exception is subject to the following provisos: —

First. —That the provocation is not sought or voluntarily provoked by the

offender as an excuse for killing or doing harm to any person.

Secondly. —That the provocation is not given by anything done in obedience to

the law, or by a public servant in the lawful exercise of the powers of such public servant.

Thirdly. —That the provocation is not given by anything done in the lawful

exercise of the right of private defence.

Explanation. —Whether the provocation was grave and sudden enough to prevent the offence from amounting to murder is a question of fact.

[9] 300. Murder. — Exception 4. —Culpable homicide is not murder if it is committed without premeditation in a sudden fight in the heat of passion upon a sudden quarrel and without the offender's having taken undue advantage or acted in a cruel or unusual manner.

Explanation. —It is immaterial in such cases which party offers the provocation or commits the first assault.

[10] 1962 Supp (1) SCR 567.

[11] (1949) 1 All.E.R. 932.

[12] See the opinion expressed by Goddar, CJ. in R v. Duffy (supra).

[13] 1975 Criminal LR 558-559, and George Mousourakis's elucidation in his paper 'Cumulative Provocation and Partial Defences in English Criminal Law'.

[14] (2012) 13 SCC 663.

[15] (2012) 8 SCC 289.
